ORIGINAL RESEARCH PAPER

Edcuation

समकालीन प्रवासी हिंदी साहित्य की प्रासंगिकता

KEY WORDS: "यह नीड़ मनोहर कृतियों का यह विश्व.कर्म रंगस्थल है

रेणु एम. ए. हिन्दी, नेट ,एम. एड., मकान नंबर 636 ,न्यू हाऊसिग बोर्ड कोलोनी, बरनाला रोड़ ,सिरसा-१२५०५५(हरियाणा)

ABSTRACT

किसी भाषा को उसकी स्थानिकता और वैश्विकता में सोचनाए एक तरह से और एक साथ उसके समूचे परिदृश्य पर विचार करना है। खासकर तबए जब आज हम एक ग्लोबल विश्व के नागरिक हैं। यह बात सिर्फ कहने भर की या शास्त्रीय चर्चा तक ही सीमित नहीं है। आज हम देखते हैं कि फेसबुकए ट्विटरए वाट्स्.अपए गूगल हैंगकृआउटए स्काइपए ई.मेल आदि विभिन्न सामुदायिक साइट्सध्संचार.माध्तमों के माध्यम से हम बेहद द्रुतगामी रूप से सामग्रियों की लेने.देन करने लगे हैं। एक.दूसरे से संवाद स्थापित कर पा रहे हैं। संवाद के एक टूल्स के रूप में भाषा की ताकत सहज संचारित उसकी सरलता में और बहुलतागामी संस्कृति को अभिव्यक्त करने की उसकी भंगिमाओं में है। हमारे जीवन के विविध रंग और तदनुरूप भाषा की वक्रताण्ण्इसी में साहित्य का अपना सौंदर्य भी है। जहाँ तक हिंदी की बात हैए तो इसकी यात्रा आदि. काल से लेकर उत्तर आधुनिक काल तक कई स्तरों पर हुई है। विषय.निरूपणए भाषाकृकौशलए परिवेश.चित्रण आदि सभी बिंदुओं पर इसने अपनी सुदीर्घ यात्रा तय की है। एक तरफ़ उसका साहित्य आज पूरे विश्व में पढ़ा.लिखा जा रहा है तो दूसरी तरफ़ उसमें पूरे विश्व की संस्कृति और समस्याएँ भी चित्रित हो रही हैं। जयशंकर प्रसाद के महाकाव्य ष्कामायनीश के काम ष्सर्गष् की ये पंक्तियाँ बेशक इस दुनिया के संदर्भ में कही गई हैंए मगर यह कितना दिलचस्प है कि ये हिंदी के वैश्विक रूप को भी चरितार्थ कर रही हैं। यह कविता की अपनी ताक़त है और यही उसकी सहज स्वीकार्यता की वज़ह भी।

है परंपरा लग रही यहाँ ठहरा जिसमें जितना बल है"।

भारत और भारत के बाहर हिंदी की लोकप्रियता और हिंदी साहित्य के पठन-पाठन को एक-साथ मिलाकर नहीं देखा जा सकता। हिंदी की लोकप्रियता के पीछे मूलतः बाज़ार और फिल्में हैं तो उसकी भाषा और उसके साहित्य के प्रोत्साहन और उसके नियमित पठन-पाठन के लिए व्यक्तिगत और संस्थागत प्रयासों/कार्यक्रमों का योगदान है। जाहिर है कि हिंदी के कई रूप और प्रयोग हैं। इन अलग-अलग रूपों और प्रयोगों से ही हिंदी को संपूर्णता प्राप्त होती है। हिंदी, भारत की राजकीय भाषा होने के साथ-साथ देश और दुनिया में लोकप्रिय होती एक बड़ी भाषा भी है। देवनागरी में लिखी जा रही यह एक मानक और सरल भाषा है। बोलने और लिखने दोनों में आसान हिंदी आज पूरे विश्व में विभिन्न माध्यमों से अपनी धाक जमा रही है। कहने की ज़रूरत नहीं कि भाषाओं और साहित्य के प्रचार-प्रसार के पीछे लेखकों की सक्रियता, प्रकाशकों का उत्साह और इन सबसे बढ़कर पाठकों के जुनून की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जिस तरह देवकीनंदन खत्री रचित 'चंद्रकांता' को पढ़ने के लिए भारत में गैर-हिंदी भाषियों ने हिंदी सीखना शुरू किया, उसी तरह हिंदी के विभिन्न मन-भावन सहित्य को पढ़ने-समझने के लिए अलग-अलग कालों में लोग हिंदी को सीखने की कोशिश करते हैं। इस संदर्भ में अभी हाल ही में दैनिक भास्कर (१२ सितंबर २०१५) में आई यह खबर हमारा ध्यान बरबस अपनी ओर खींचती है :-

भक्तिकाल को समझने के लिए सीखी हिंदी

"यूरोप के बाल्टिक देशों में से एक लिथुआनिया में हिंदी जानने वालों की संख्या न के बराबर है। लेकिन भारतीय दर्शन खासकर भक्तिकाल से ऐसा लगाव हुआ कि इसे समझने के लिए हिंदी सीख ली। लिथुआनिया के विल्नियस विश्वविद्यालय में हिंदी के प्रोफेसर डॉ. देइमान्त्स वालांस्यूनस ने सूरदास, कबीरदास और मीराबाई को पढ़ने और समझने के लिए हिंदी भाषा सीखी..."। डॉ. वालांस्यूनस ने ब्रिटिश और हिंदी सिनेमा का तुलनात्मक अध्ययन पर शोध किया है। उनका कहना है कि ब्रिटिश फिल्म स्लमडॉग मिलेनियर में जो भारत दिखाया गया था, वह गलत था"। दैनिक भास्कर (१२ सितंबर २०१५) में ही आई यह ख़बर भी हमें ऐसे हिंदी-प्रेमी के प्रति नतमस्तक करा देती है-

श्रीलंका के विवि में हिंदी विभाग खोलने का सपना

"श्रीलंका के रुहुना विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग खोलने के लिए पिछले आठ साल से संघर्ष कर रही हैं डॉ. दसनायके मुडियान्सेलाग इंदिरा। वे बताती हैं कि भारत की ज्यादातर भाषाओं की ही तरह श्रीलंका की भाषा सिंहली की भी उत्पत्ति संस्कृत से ही हुई है। यही कारण है कि सिंहली और हिंदी के कई शब्द एक से हैं। मसलन नदी, आयुर्वेद, औषधि जैसे शब्दों को उच्चारण दोनों ही भाषा में समान है। इसी समानता के कारण श्रीलंका में खासकर दक्षिणी प्रांत के लोग हिंदी सीखने में काफी रुचि दिखा रहे हैं..."। लेकिन सरकार इसमें कोई मदद नहीं कर रही है। इंदिरा का कहना है कि वि.वि. में हिंदी विभाग खोलना ही अब उनका एकमात्र सपना है। डॉ. इंदिरा के अनुसार श्रीलंका के लोग मानते हैं कि सिंहली भाषा में लिखे साहित्य से ज्यादा गहराई हिंदी साहित्य में होती है"।

आइए, इस क्रम में हम प्रवासी हिंदी साहित्य पर कुछ चर्चा करें और देखें कि भारत के बाहर विभिन्न हिंदी सेवी संस्थाएँ और रचनाकार हिंदी में किस तरह लेखन/कार्यक्रम कर रहे हैं और कैसे उनकी रचनाओं का प्रचार-प्रसार हो रहा है। उनकी कहानियाँ, कविताएँ, उपन्यास अन्य भाषाओं में अनूदित हो रहे हैं। इस लेख में हिंदी के प्रवासी साहित्य या कहें प्रवासी साहित्यकारों के हिंदी साहित्य-सृजन की एक छोटी झलक यहाँ प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है। मगर इसके पहले 'प्रवासी हिंदी साहित्य' पर कुछ संक्षिप्त चर्चा करना यहाँ आवश्यक है। शाब्दिक अर्थ पर जाएँ तो प्रवास में अर्थात अपनी जन्मभूमि से दूर रह रहे लेखकों द्वारा लिखा जानेवाला साहित्य प्रवासी साहित्य कहलाएगा। इस हिसाब से अमूमन हर वह लेखक जो रोजगार की तलाश में, प्राकृतिक या मानवीय आपदाओं के कारण अपने जन्मस्थल से विस्थापित / दूर है, वह एक प्रवासी लेखक है और उसका लिखा हुआ प्रवासी साहित्य।

आधुनिक काल में यूरोप से शुरू हुई औद्योगिक क्रांति जब भारतीय उपमहाद्वीप समेत पूरी दुनिया में फैली तो इससे न सिर्फ साम्राज्यवाद पनपा बल्कि बड़े पैमाने पर पूरे विश्व में लोगों का विस्थापन भी हुआ। कच्चे मालों का स्थानांतरण, प्रसंस्करण और विपणन किया जाने लगा। ऐसे में बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए मज़दूरों की आवश्यकता बढ़ने लगी। मॉरीशस, त्रिनिडाड और टोबैगो, सूरीनाम, फ़िज़ी जैसे दूर-दराज के देशों में भारतीयों के प्रवासन को इन्हीं आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संदर्भों में देखने की ज़रूरत है। इसी तरह खाड़ी देशों में नर्स, नाई, राजमिस्त्री, प्लंबर आदि अर्द्ध—प्रशिक्षित वर्गों का केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु जैसे प्रदेशों से जाना, उसी पुरानी प्रक्रिया के विस्तारित और कहें तो कुछ परिवर्तित रूप हैं। आज सूचना क्रांति और वैज्ञानिक प्रगति के इस युग में 'सिलिकॉन वैली' और 'नासा' में क्रमशः कंप्यूटर-इंजीनियर और वैज्ञानिकों की बढती संख्या भी इस विश्व-प्रवासन को पुष्ट करती है। गाँवों से शहरों में आना जहाँ अंतर्देशीय विस्थापन है वहीं एक देश से दूसरे देश में जाना अंतर्राष्ट्रीय विस्थापन। इसी को लक्ष्य कर अरुण कमल की लिखी ये पंक्तियाँ आज कितनी प्रासंगिक हैं-

"कौन नहीं चाहता जहाँ जिस ज़मीन उगे
मिट्टी बन जाए वहीं
पर दोमट नहीं, तपता हुआ रेत ही है घर
तरबूज़ का
जहाँ निभे ज़िंदगी वहीं घर वहीं गाँव" ('अपनी केवल धार')

इस विस्थापन को अपने तईं अंग्रेजी में भारतीय मूल के वी.एस. नॉयपाल, अमिताभ घोष और झुंपा लाहिड़ी सरीखे लेखक भी उठा रहे हैं। काफ़ी हद तक इस विशेष परिदृश्य के लिए रूढ़ हो गए 'प्रवासी हिंदी साहित्य' की दुनिया में जब हम प्रवेश करते हैं तो इसके सिरे हमें खाड़ी देश से लेकर यूरोप तक, अटलांटिक–प्रशांत महासागरीय देशों से लेकर अमेरिका और कनाडा तक फैले दिखते हैं। आज मुख्य हिंदी साहित्य के बरक्स इनका एक विस्तृत कोशागार तैयार हो गया है, जिसमें हर तरह की रचनाएँ हैं। कुछ कचास ली हुई तो कुछ एकदम मँजी हुई। इन रचनाओं में 'कल्चरल शॉक' के जिक्र हैं, समायाजोन (अडॉप्टेशन) की कोशिश है, दूरवर्ती देशों की अपनी समस्याएँ हैं, भूमंडलीकरण और बाज़ार के बढ़ते प्रभावों की अपनी उठापटक है, मानवीय संवेदनाओं की गाथा और सामाजिक अंतर्विरोध के अपने ताने-बाने हैं। और इन सबके साथ और इन सबके बीच हिंदी साहित्य की अपनी रचनात्मक विविधता और संपन्नता है। इस क्रम में कुछ विशेष प्रवासी हिंदी लेखकों पर चर्चा कर लेना समीचीन होगा-

उषा प्रियंवदा

इनका जन्म २४ दिसम्बर १९३० को हुआ।। कानपुर में जन्मी उषा प्रियंवदा ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए. तथा पी-एच. डी. की पढ़ाई पूरी करने के बाद दिल्ली के लेडी श्रीराम कालेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन किया। फुलब्राइट स्कालरशिप लेकर वे अमरीका चली गई। अमरीका के ब्लूमिंगटन, इंडियाना में दो वर्ष पोस्ट डाक्टरल अध्ययन किया और १९६४ में विस्कांसिन विश्वविद्यालय, मैडिसन में दक्षिण एशियाई विभाग में सहायक प्रोफेसर के पद पर अपना कार्य प्रारंभ किया। उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में छठे और सातवें दशक के भारतीय शहरी पारिवारिक/सांस्कृतिक परिवेश का संवेदनशील एवं प्रभावी चित्रण है। शहरी जीवन में रूमानियत के बरक्स उदासी, अकेलेपन, ऊब, मोहभंग आदि के चित्रण में इनके कथाकार ने अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाई है। इनके कहानी संग्रह हैं- "वनवास", "कितना बड़ा झूठ", 'शून्य', 'जिन्दगी और गुलाब के फूल', 'एक कोई दूसरा' आदि। इनके उपन्यास हैं- 'रुकोगी नहीं राधिका', 'शेष यात्रा', 'पचपन खंभे लाल दीवारें', 'अंतर्वंशी', 'भया कबीर उदास' आदि।

अभिमन्यु अनत

मॉरीशस में हिंदी साहित्य की एक सुदीर्घ परंपरा है। कई लोग वहाँ इस कार्य में लगे हुए हैं। व्यक्तिगत और संस्थागत दोनों स्तरों पर। इस प्रसंग में वहाँ के हिन्दी कथा-साहित्य के सम्राट अभिमन्यु अनत का यहाँ जिक्र करना अप्रासंगिक नहीं होगा। ९ अगस्त, १०३७ को मॉरीशस में जन्मे अभिमन्यु अनत की मुख्य रचनाएँ 'कैक्टस के दाँत', 'नागफनी में उलझी साँसें', 'गूँगा इतिहास', 'देख कबीरा हाँसी', 'इंसान और मशीन', 'जब कल आएगा यमराज', 'लहरों की बेटी', 'एक बीघा प्यार', 'कुहासे का दायरा' आदि हैं। इनकी कविताओं में विद्रोह के स्वर हैं और शोषण एवं अत्याचार के ख़िलाफ़ बेबाक अभिव्यक्ति है। बेरोज़गारी समेत कई समकालीन समस्याओं पर इनका लेखन प्रभावी है। हिन्दी के अध्यापन एवं नाट्य प्रशिक्षण से जुड़े रहे अनत ने अपने विभिन्न हिन्दी उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से मॉरीशस को समकालीन विश्व हिन्दी साहित्य में एक महत्वपूर्ण मुकाम प्रदान करवाया।

उल्लेखनीय है कि यहाँ रह रहे बहुसंख्यक निवासियों के पूर्वज भारतीय थे जिन्हें अंग्रेज़ों ने गन्ने की खेती में कार्य करने के लिए मुख्यतः बिहार और उत्तर-प्रदेश से लाया था। मज़दूरों के रूप में पहुँचे वे भारतीय वहीं बस गए। बाद में मॉरीशस अंग्रज़ों की गुलामी से मुक्त हुआ। जो भारतीय श्रमिक बनकर वहाँ आए थे, उनकी परवर्ती पीढ़ियाँ आज पढ़ी-लिखी और कमोबेश सम्पन्न कही जा सकती हैं। मगर अपनी यह सामाजिक/आर्थिक स्थिति प्राप्त करने के लिए उन्होंने जी-तोड़ मेहनत की है। अभिमन्यु ने अपनी रचनाओं में भारतीय पृष्ठभूमि के बीच उनके इस संघर्ष को बखूबी चित्रित किया है। अभिमन्यु अनत ने कहानी और कविता दोनों विधाओं में साधिकार लिखा। उनके २९ से अधिक उपन्यास प्रकाशित हुए हैं। उनका पहला उपन्यास 'और नदी बहती रही' १९७० में प्रकाशित हुआ। 'अपना मन उपवन' ,'लाल पसीना' आदि उनके चर्चित उपन्यास हैं। 'लाल पसीना' १९७७ में छपा जो भारत से मॉरीशस आए गिरमिटिया मज़दूरों की मार्मिक कहानी कहता है। इस चर्चित उपन्यास का फ्रेंच में अनुवाद हुआ। इस उपन्यास के दो परवर्ती अंश प्रकाशित हुए, जिनके शीर्षक हैं- 'गांधीजी बोले थे' (१०८४) तथा 'और पसीना बहता रहा' (१९९३)। भारत से बाहर हिन्दी में उपन्यास-त्रयी लिखने वाले वे अबतक के एकमात्र उपन्यासकार हैं।

सुषम बेदी

भारतीय मूल की अमेरिकी उपन्यासकार, अभिनेत्री एवं शिक्षाविद सुषम बेदी ने १९७४ से १९७९ तक टाईम्स ऑफ इंडिया में ब्रुसेल्स, बेल्जियम से उनकी संवाददाता के रूप में लेखन-कार्य किया।१९७९ में वे अमेरिका आ गई। कई उल्लेखनीय उपन्यासों और कहानी संग्रह की लेखिका सुषम बेदी ने अभिनय भी किया है। इनके दो उपन्यासों 'हवन' और 'वापसी' का हिंदी से उर्दू में अनुवाद किया गया। एक दशक से अधिक समय से चलाया जा रहा उनका हिंदी भाषा शिक्षण कार्यक्रम (हिंदी लैंग्वेज पेडागोगी) एक उल्लेखनीय कार्यक्रम है। कोलंबिया विश्वविद्यालय में अध्यापन के दौरान इन्होंने हिंदी के विद्यार्थियों को ध्यान में रखकर (खासकर विदेशों में रह रहे विदेशियों और भारतीय मूल के हिंदी विद्यार्थियों के लिए) हिंदी की वृहद सामग्री तैयार की जिसका प्रयोग आज कई देशों में प्रयोग में लाया जा रहा है।

पहचान के संकट, मौलिकता और युग-परिवर्तन, सामंजस्य जैसे बिंदुओं को आधार बनाकर इन्होंने प्रवासी भारतीयों के संघर्षों को एक रचनाकार के रूप में अपने तईं बखूबी अभिव्यक्ति प्रदान की। १९९० से १९९१ तक बीबीसी के एक

साप्ताहिक कार्यक्रम 'लेटर्स फ्रॉम एब्रोड' में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा, जहाँ वे न्यूयार्क के रोजमर्रा के जीवन पर चर्चा किया करती थीं। कोलंबिया विश्वविद्यालय में हिंदी उर्दू भाषा की कार्यक्रम संयोजिका रहीं सुषम बेदी ने हिंदी साहित्य से इतर शिक्षा-विज्ञान के क्षेत्र में भी काफी काम किया। इनके उपन्यास 'हवन' का 'द फायर सैक्रीफायस' के नाम से डैविड रुबिन द्वारा अंग्रेजी में अनुवाद किया गया जिसे हेनमैन इंटरनेशनल ने १९९३ में प्रकाशित किया। हिंदी नाट्य प्रयोग के संदर्भ में इन्होंने कई विषयों पर लिखा। इनका उपन्यास 'इतर' १९९२ में प्रकाशित हुआ। लघु-कथाओं का इनका संग्रह 'चिड़िया और चील' १९९५ में प्रकाशित हुआ। 'कतरा दर कतरा' १९९४ में प्रकाशित हुआ। इनके उपन्यास हैं- 'लौटना'(१९९२),'हवन'(१९८९),'मोर्चे'(२००६)आदि। इन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, निबंध सहित कई विधाओं में महत्वपूर्ण लेखन कार्य किया। नास्टेलेजिया और भारत से जुड़ी स्मृतियों से आगे जाकर इनके लेखन में विदेशों की अपनी समस्याएँ पूरी गझिनता मे अभिव्यक्त होती हैं। हिंदी साहित्य में इनके योगदान को देखते हुए जनवरी २००६ में साहित्य अकादमी, नई दिल्ली द्वारा इन्हें सम्मानित किया गया।

तेजेंद्र शर्मा

'काला सागर'(१९९०), 'ढिबरी टाइट'(१९९४), 'देह की कीमत' (१९९९), ये क्या हो गया' (२००३), 'बेघर आँखें' (२००७) जैसे चर्चित कहानी-संग्रहों के लेखक तेजेंद्र शर्मा ब्रिटेन के एक ऐसे कहानीकार हैं जिनके संकलन नेपाली, पंजाबी, उर्दू आदि भाषाओं में अनूदित और चर्चित हुए हैं। नाटक, फ़िल्म एवं अन्य साहित्यिक गतिविधियों से जुड़े रहनेवाले तेजेंद्र शर्मा का जन्म २१ अक्टूबर, १९५२ को पंजाब में हुआ। दिल्ली विश्विद्यालय से अंग्रेज़ी में एम.ए. किए हुए तेजेंद्र हिंदी में अपनी सक्रियता के पीछे अपनी दिवंगत पत्नी इंदु शर्मा की प्रेरणा बतलाते हैं। 'ये घर तुम्हारा है' (२००७) इनकी कविताओं एवं ग़ज़लों का संग्रह है।

दूरदर्शन के लिए "शांति" सीरियल का लेखन भी इन्होंने किया। इंग्लैंड से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'पुरवाई' का इन्होंने कुछ समय तक सम्पादन किया। इन्हें 'ढिबरी टाइट' के लिये १९९५ में महाराष्ट्र साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला। १९८७ में इन्हें सुपथगा सम्मान प्राप्त हुआ। कृति यू.के. द्वारा वर्ष २००२ के लिये इनकी कहानी 'बेघर आँखें' को सर्वश्रेष्ठ कहानी का पुरस्कार प्राप्त हुआ। वर्ष १९९८ में लन्दन में प्रवासी हो जाने के उपरांत इन्होंने क्रमशः 'इंदु शर्मा कथा सम्मान' को अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया। 'अंतर्राष्ट्रीय इंदु शर्मा कथा सम्मान' प्राप्त करने वाले साहित्यकारों में चित्रा मुद्गल, संजीव, डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी, एस.आर. हरनोट, भगवान दास मोरवाल आदि कुछ महत्वपूर्ण भारतीय नाम हैं। इंग्लैंड में रह कर हिन्दी साहित्य रचने वाले साहित्यकारों को सम्मानित करने हेतु "पद्मानंद साहित्य सम्मान" की शुरूआत की गई। इस योजना के अंतर्गत डॉ. सत्येन्द्र श्रीवास्तव, दिव्या माथुर एवं नरेश भारतीय को सम्मानित किया गया। यह संतोषप्रद है कि कथा यू.के. के माध्यम से लन्दन में निरंतर कथा गोष्ठियों, कार्यशालाओं एवं दूसरे साहित्यिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है। यॉर्क विश्विद्यालय में कहानी पर कार्यशाला करने वाले ये ब्रिटेन के पहले हिन्दी साहित्यकार हैं। इनकी कहानियों एवं कविताओं के अंग्रेज़ी, उर्दू, पंजाबी, नेपाली, मराठी, गुजराती, ओड़िया,एवं चेक भाषाओं में अनुवाद हुए हैं। इनकी कहानियों में मानवीय रिश्तों में मौजूद करुणा और संघर्ष के कई अंतर्स्तर देखने को मिलते हैं।

उषा राजे

ब्रिटेन की हिंदी साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका 'पुरवाई' की सह-संपादिका तथा हिंदी समिति यू.के. की उपाध्यक्षा रहीं उषा राजे की सक्रियता निश्चय ही सराहनीय है। ये तीन दशकों तक ब्रिटेन के 'बॉरो ऑफ मर्टन' की शैक्षिक संस्थाओं में विभिन्न पदों पर कार्यरत रहीं। इन्होंने 'बॉरो ऑफ मर्टन' के पाठ्यक्रम का हिंदी अनुवाद किया। इनके काव्य-संग्रह हैं- 'विश्वास की रजत सीपियाँ,' 'इंद्रधनुष की तलाश में' आदि। इनके कहानी संग्रह हैं :- 'प्रवास में', 'वॉकिंग पार्टनर', 'वह रात और अन्य कहानियाँ'। ब्रिटेन के प्रवासी भारतवंशी लेखकों का प्रथम कहानी-संग्रह 'मिट्टी की सुगंध' में इनकी कहानी शामिल की गई।

डॉ. कृष्ण कुमार

डॉ. कृष्ण कुमार बर्मिंघम में बसे भारतीय मूल के हिंदी लेखक है। कृष्ण कुमार लंबी अवधि से भारतीय भाषाओं की ज्योति की लौ 'गीतांजलि बहुभाषी समाज' के माध्यम से जलाए हुए हैं। 'गीतांजलि' ब्रिटेन की एकमात्र ऐसी संस्था है जो भारत की तमाम भाषाओं को मंच प्रदान करती है। उल्लेखनीय है कि डॉ. कुमार १९९९ के विश्व हिन्दी सम्मेलन, लंदन के अध्यक्ष थे। डॉ. कुमार की कविताओं में विचार और संवेदना के तत्व परस्पर गुँथे हुए मिलते हैं। इनके प्रकाशित कविता संग्रहों से गुजरते हुए कहा जा सकता है कि विचारशीलता इनकी कविताओं का केंद्रीय तत्व है, जिसने इनकी कविताओं को एक आधुनिक रूप प्रदान किया। 'गीतांजलि' ने बर्मिंघम के कवियों को एक महत्वपूर्ण मंच प्रदान किया। ।'गीतांजलि' के सदस्यों में विभिन्न भारतीय भाषाओं के कवि शामिल हैं। इससे जुड़े अजय त्रिपाठी, स्वर्ण तलवार, रमा जोशी, चंचल जैन, विभा केल आदि काफी अरसे से कविता लिख रहे हैं। प्रियंवदा देवी मिश्र की रचनाओं में छायावाद की झलक दिखती है।

दिव्या माथुर

'वातायन' की संस्थापक अध्यक्षा और यू.के. हिंदी समिति की उपाध्यक्ष दिव्या माथुर प्रवासी टुडे की प्रबंध संपादिका भी रहीं। लंदन स्थित नेहरू सेंटर से जुड़ी दिव्या ने इंडो-ब्रिटिश संबंधों के प्रोत्साहन की दिशा में कई महत्वपूर्ण कार्य किए। अंग्रेज़ी में एम.ए. करने के अतिरिक्त दिल्ली एवं ग्लॉस्गो से इन्होंने पत्रकारिता में डिप्लोमा किया। रॉयल सोसाइटी ऑफ आर्ट्स की फ़ेलो रहीं दिव्या ने नेत्रहीनता से संबंधित कई संस्थाओं में भी अपना सक्रिय योगदान किया। उल्लेखनीय है कि इनकी कई रचनाएँ ब्रेल लिपि में उपलब्ध हैं। अंतर्राष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन की सांस्कृतिक अध्यक्ष रहीं दिव्या माथुर कई पत्र, पत्रिकाओं के संपादक मंडल में भी शामिल रहीं।

दिव्या माथुर के नाटक व कहानियों के कई सफल मंचन हुए। रेडियो एवं दूरदर्शन पर उनका प्रसारण हुआ। इनकी कुछ कविताओं को कला संगम संस्था द्वारा भारतीय नृत्य शैलियों के माध्यम से भी प्रस्तुत किया गया। लंदन में कहानियों के मंचन की शुरूआत करने में इनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। रीना भारद्वाज, कविता सेठ और सतनाम सिंह जैसे संगीतज्ञों ने इनके गीत और ग़ज़लों को न केवल संगीतबद्ध किया, बल्कि उन्हें अपनी आवाज़ से भी नवाज़ा। इनके कविता संग्रह हैं- 'अंत: सलिला', 'रेत का लिखा', 'ख्याल तेरा' , '११ सितंबर : सपनों की राख तले' आदि। इनका कहानी संग्रह 'आक्रोश' काफी चर्चित रहा। इनकी कहानियाँ और कविताएँ भिन्न भाषाओं के संकलनों में शामिल की गई। विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा इन्हें सम्मानित किया गया।

पूर्णिमा वर्मन

पूर्णिमा वर्मन का जन्म २७ जून १९५५ को पीलीभीत में हुआ। इन्होंने संस्कृत साहित्य में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की। स्वातंत्र्योत्तर संस्कृत साहित्य पर शोध और पत्रकारिता और वेब डिज़ायनिंग में डिप्लोमा करने वाली पूर्णिमा वर्मन का नाम वेबसाइट पर हिंदी को लोकप्रिय बनाने वालों में अग्रगण्य है। उनके संपादन में निकल रही हिंदी इंटरनेट पत्रिकाएँ 'अभिव्यक्ति' तथा 'अनुभूति' की सामग्रियों को खूब सराहना और लोकप्रियता मिली। इनके द्वारा इन्होंने प्रवासी तथा विदेशी हिंदी लेखकों को एक बड़ा मंच प्रदान करने का उलेखनीय काम किया। लेखन एवं वेब प्रकाशन के अतिरिक्त वे रंगमंच, संगीत तथा हिंदी के अंतर्राष्ट्रीय विकास से संबंधित कई कार्यों से जुड़ी रहीं। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, साहित्य अकादमी तथा अक्षरम के संयुक्त अलंकरण 'प्रवासी मीडिया सम्मान', जयजयवंती द्वारा जयजयवंती सम्मान, रायपुर में सृजन गाथा के 'हिंदी गौरव सम्मान' तथा केंद्रीय हिंदी संस्थान के मोटूरि सत्यनारायण पुरस्कार से सम्मानित पूर्णिमा के 'पूर्वा' एवं 'वक्त के साथ' महत्वपूर्ण कविता संग्रह हैं। इनकी रचनाओं मसलन 'फुलकारी' (पंजाबी में), 'मेरा पता' (डैनिश में), 'चायखाना' (रूसी में) आदि का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हुआ।

इनके अतिरिक्त

अमेरिका के प्रवासी साहित्यकारों में सुनीता जैन, सोमा वीरा, कमला दत्त, वेद प्रकाश बटुक, इन्दुकान्त शुक्ल, उमेश अग्निहोत्री, अनिल प्रभा कुमार, सुरेश राय, सुधा ओम ढींगरा, मिश्रीलाल जैन, शालीग्राम शुक्ल, रचना रम्या, रेखा रस्तोगी, स्वदेश राणा, नरेन्द्र कुमार सिन्हा, अशोक कुमार सिन्हा, अनुराधा चन्दर, आर. डी. एस 'माहताब',ललित अहलूवालिया, आर्य भूषण, भूदेव शर्मा, वेद प्रकाश सिंह 'अरूण', उषा देवी कोल्हट्कर, स्वदेश राणा आदि का नाम उल्लेखनीय है।

कनाडा के प्रवासी हिंदी लेखकों की सूची में अश्विन गाँधी, हरिशंकर आदेश, शैलजा सक्सेना, सुमन कुमार घई, सुरेश कुमार गोयल आदि आते हैं तो खाड़ी देशों के हिंदी रचना-पटल पर अशोक कुमार श्रीवास्तव, उमेश शर्मा, कृष्ण बिहारी, दीपिका जोशी, रामकृष्ण द्विवेदी मधुकर, विद्याभूषण धर, जीतेंद्र चौधरी आदि लेखक सक्रिय हैं।

ब्रिटेन के हिंदी प्रवासी लेखकों में नरेश भारतीय, पद्मेश गुप्त, तितिक्षा शाह, महेंद्र वर्मा, उषा वर्मा, शैल अग्रवाल, वंदना मुकेश की रचनाओं ने भी अपनी ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। इसी तरह विश्व के अन्य हिस्सों में भी कई प्रवासी लेखक सक्रिय हैं। हिंदी की सुचिंतित परंपरा में इन्हें विकसमान कलियों के रूप में देखना ग़लत न होगा। उनके रचनात्मक योगदान को सभी के समक्ष लाने की दिशा में अभी कई अन्य संस्थागत-कार्य किए जाने अपेक्षित हैं। ज़ाहिर है, भारत की संपर्क भाषा हिंदी की वैश्विक पटल पर क्रमशः बढ़ती रफ़्तार को सही दिशा देने की और उस पथ पर नवीनतम पीढ़ी को लाने की चुनौती हम सबके समक्ष खड़ी है।

ज़ाहिर है कि विदेशों में सक्रिय लेखकों की यह एक अत्यंत छोटी सूची है। इस आलेख में सभी को शामिल किया जाना संभव नहीं है। इस छोटे से विवरण के बारे में चर्चा करने का एकमात्र उद्देश्य यहाँ यही है कि हम हिंदी के वैश्विक परिदृश्य से कुछ अवगत हो सकें और उन्हें जान-समझ और पढ़ सकें। इन्हें हिंदी की बढ़ती लोकप्रियता और उसके निरंतर अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप को प्राप्त करने की दिशा में देखा जाना भी ग़लत न होगा।

विदित है कि पश्चिम के कई विश्वविद्यालयों में ओरिएंटल स्टीडज विभाग के अंतर्गत हिंदी और भारतीय भाषाओं को पढ़ाया जाता है। इन पाठ्यक्रमों में हिंदी साहित्य की कई रचनाएँ विभिन्न विधाओं में पढ़ाई जाती हैं। आज जब हिंदी का परचम निरंतर लहराता हुआ दिन-प्रति-दिन नित्य नई ऊँचाइयों को हासिल कर रहा है, ऐसे में विश्व के विभिन्न कोनों में सक्रिय रचनाकारों के बारे में विस्तार और करीब से जानना और उन्हें समझना कितना आवश्यक हो गया है! इसी तरह खाड़ी देशों सहित विभिन्न एशियाई देशों में हिंदी विभागों को समुन्नत रूप से विकसित किया जा रहा है। मॉरीशस, अमेरिका, इंग्लैण्ड, चीन, जापान, सूर्यनाम, फिजी, ट्रिनिडाड आदि देशों में हिंदी साहित्य के विकास को लेकर व्यक्तिगत और संस्थागत स्तर पर कई कार्य किए जा रहे हैं।

मॉरिशस की 'हिंदी प्रचारिणी सभा' का नाम यहाँ उल्लेख करना समीचीन है, जिसने हिंदी भाषा और साहित्य के परिवर्धन पर महत्वपूर्ण काम किया है। उदाहरण के लिए 'प्रेमचंद शताब्दी' पर इसके द्वारा मॉरिशस में प्रेमचंद पर किए गए कार्यक्रम की खूब सराहना हुई। भारत सरकार द्वारा 'प्रेमचंद विशेषज्ञ' के रूप में तब कमल किशोर गोयनका को मॉरिशस भेजा गया था। उल्लेखनीय है कि मॉरिशस में तात्कालिक प्रधानमंत्री डॉ. शिवसागर रामगुलाम की अध्यक्षता में इस कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। इसी कड़ी में प्रो. गोविन्दनारायण शर्मा (अमेरिका), डॉ. लोठार लुत्से (जर्मनी) जैसे स्व-प्रेरित हिंदी-सेवियों के कार्यों को कौन भूल सकता है! विश्व हिंदी सम्मेलन के विभिन्न आयोजनों से हिंदी के प्रचार-प्रसार में काफी सहायता मिली है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। १० जनवरी को 'विश्व हिंदी दिवस' मनाए जाने की शुरूआत के पीछे हिंदी के इसी वैश्विक परिदृश्य के आधार को निरंतर बढ़ाए जाने के एक उपक्रम में देखे जाने की ज़रूरत है। ज़ाहिर है, अभी यह यात्रा मीलों और तय करनी है।